संकटोत्तर जी-20: भारतीय परिप्रेक्ष्य *

सुबीर गोकर्ण

प्रस्तावना

मुझे यह मुख्य भाषण देने के लिए आमंत्रित करने के लिए मैं आयोजकों को धन्यवाद देता हूं। इस सत्र का शीर्षक है ''जी-20 से क्या अपेक्षा रखता है'', अत: मैं सोचता हूं कि यहां संपूर्ण देश के संबंध में बोलना उचित होगा। निंसदेह, जी-20 प्रक्रिया के साथ मैं केंद्रीय बैंक के उप के रूप में जुड़ा रहा हूं और उस क्षमता में मुझे विभिन्न मामलों में भारतीय स्थिति को आकार देने में योगदान देने का अवसर मिला। अत:, राष्ट्रीय स्थिति की बात करने से अच्छा यह होगा कि उन विचारों को आपस में बांटा जाए जो जी-20 के विभिन्न फोरमों में उठाए गए कदमों को दर्शाते हैं। इसे दिमाग में रखते हुए, मेरा प्रस्तुतीकरण तीन व्यापक घटकों में विभाजित है। पहला, मैं यह देखता हूं कि जी-20 ने दो वर्ष पहले संभाव्य रूप से अधिक गंभीर रहने वाले संकट से बचने के लिए क्या कदम उठाए जो अनिवार्यत: इस बात के लिए संदर्भ उपलब्ध कराता है कि ''सामान्य'' स्थिति में इसकी भूमिका क्या होगी। दूसरा, मैं समूह के भीतर भिन्नताओं को खोजता हूं जिससे ढांचागत मामलों पर वैश्विक सहयोग के माध्यम से जो प्राप्ति की वास्तविक आशा सीमित हो जाती है। तीसरा, मैंने इन दो बातों की नींव पर ''उभरती बाजार अर्थव्यवस्था'' की स्थिति समझने की बात सोची है जो मैं सोचता हूं कि अनेक मामलों पर भारतीय रुझान दर्शाएगी।

संकट का संदर्भ

जी-20 का मूल पिछले संकट में हैं और वह भी वित्तीय क्षेत्र में ही शुरू हुआ था और जो अनेक देशों तक फैल गया था। यह 1997-98 का पूर्व-एशियाई संकट था जिसकी जड़े उन अर्थव्यवस्थाओं में विदेशी धन बढ़ने में थीं जो इस धन को संभालने में सक्षम नहीं

* मुंबई में 27 अक्तूबर 2010 को आयोजित आइसीआरआइईआर/इन्वेंट/डीआइई सम्मेलन में ''संकट से परे वृद्धि और वित्तीय स्थिरता के लिए नीति - वैश्विक सहयोग के लिए गुंजाईश'' पर डॉ.सुबीर गोकर्ण, उप गवर्नर, भारतीय रिज़र्व बैंक द्वारा दिया मुख्य भाषण।

थीं। यह तथ्य कि संकट में निहित कारकों में से एक - विदेशी पूंजी - ने उन्नत और उभरती अर्थव्यवस्थाओं को जोड़ दिया और साथ में आने वाले दोनों समूहों को एक आधार उपलब्ध कराया कि वे एक ओर उभरती अर्थव्यवस्थाओं की और दूसरी ओर उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में स्थित वैश्विक वित्तीय संस्थाओं की संवेदनशीलता कम करें।

निसंदेह, पूर्व-एशियाई संकट दब गया क्योंकि प्रभावित देशों ने अनुवर्ती वर्षों में मजबूत प्रतिकार दर्शाया था। सामूहिक समाधान की आवश्यकता, जैसे कि वे जो कि जी-20 ने उपलब्ध कराए होते, कम महसूस हुई क्योंकि इस संकट से अधिक प्रभावित और इससे बचे हुए देशों ने भावी संकट के प्रति अपनी सुरक्षा मजबूत कर ली। चूंकि इस संकट का उन्नत देशों पर कोई खास समष्टिआर्थिक प्रभाव नहीं पड़ा था, वे भी ढांचागत बदलाव के लिए कोई सामूहिक रणनीति बनाने के लिए अधिक इच्छुक नहीं थे जो कि वैश्विक अर्थव्यवस्था को स्थिर करने में सहायक हो सकते थे और इसे संकट के प्रति कम संवेदनशील बना सकते थे। निसंदेह, किसी विशेष एजेंडा के बिना समूह आगे बढ़ाते रहने का एक महत्वपूर्ण कारण यह था कि सदस्य देशों के संस्थागत प्रतिनिधि एक दूसरे को जानने लगे थे जिससे हाल के संकट के दौरान संप्रेषण बना रहा जब यह समूह वास्तव में प्रभावी बना, शायद जैसा वह हो सकता था उससे अधिक आसान और प्रभावी।

वास्तव में, तब संकट के कारण बने समूह को अपनी क्षमता दिखाने ला अवसर प्राप्त हुआ जबकि दूसरा समूह प्रेरित हो रहा था। इस संकट का मूल वित्तीय क्षेत्र में भी था जिससे समूह का ढांचे की संगतता बनाए रखने में सहायता मिली जिसमें इसके मुख्य घटक वित्त मंत्रालय और केंद्रीय बैंक थे। किंतु, इस दौर में नए संकट के मूल उन्नत अर्थव्यवस्थाओं के वित्तीय क्षेत्रों में थे जिससे संकटोत्तर ढांचागत मामलों पर कदम उठाने के समूह के प्रयास के लिए कुछ विशेष चुनौतियां सामने आईं। इस बिंदु पर मैं बाद में आऊंगा।

मेरा कहना यह है कि इस समूह के मूल और ढांचे ने इसे गहरे वैश्विक मंदी में बदलने वाले इस संकट से निपटने में इसे उपयुक्त और अंतत: प्रभावी बनाया। ऐसे अनेक प्रश्न उठे कि इस समूह ने वास्तव में क्या किया जिससे संकट का असर कम हो गया। कुछ ने तर्क दिया कि हालांकि सभी देश जी-20 के सदस्य नहीं थे फिर भी इस संकट का सामना करने के लिए विभिन्न देशों द्वारा उठाए गए कदम एक जैसे थे। यह बात सच हो सकती है, किंतु मैं यह तर्क दूंगा कि यह वास्तव में शक्ति का प्रदर्शन और समूह का सामूहिक संकल्प था जिससे वैश्विक जोखिम धारकों का विश्वास बहाल हुआ कि अंतत: संकट समाप्त हो जाएगा। मेरे अनुसार, अलग-अलग और बिना सहयोग वाले प्रतिसाद से ऐसा परिणाम नहीं मिला होता जैसा कि जी-20 की एकता से मिला, भलेही प्रत्येक देश द्वारा उठाए गए कदम एक समान होते।

नवंबर 2008 और 2009 के वाशिंगटन सम्मेलन से शुरू करते हुए, मेरा मानना है कि संकट और अधिक आधारभूत मामलों के दोनों निकटवर्ती पहलुओं पर समूक का विशेष ध्यान होना वैश्विक विश्वास की बहाली का मुख्य कारण था। आर्थिक सुधार धीमा और कु खंडित रहा है, किंतु संभाव्य विचलनों को सामूहिक प्रतिसादों से दूर किया गया है जिससे यह विश्वास बहाल हुआ है कि सुधार टिकाऊ हो सकता है। इसके अलावा, समूह द्वारा विभिन्न प्रकार के ढांचागत सुधारों को दिए गए महत्व से यह संकेत प्रेषित हुआ कि इसका लक्ष्य मात्र तात्कालिक संकट से निपटना नहीं है बल्कि ऐसे उपाय करना भी है जिससे संकट की संभाव्य पुनरावृत्ति काफी कम हो जाए।

जैसा कि हम ढांचागत सुधार संबंधी अपने अनुभव से जानते हैं, संकट हमेशा सुधार के उपायों पर सहमति प्राप्ति का अवसर प्रदान करता है जो कि सामान्य स्थिति में नहीं मिलता। यह नेतृत्व का दायित्व होता है कि वह इससे लाभ उठाए और सुधारों को आगे बढ़ाएं जो बदलती वैश्विक स्थिति की जरूरत पूरी करेंगे। ढांचागत मामलों पर समूह का फोकस उस विश्वसनीयता का कारण है जो संकट के प्रबंधन के उपायों में इसे मिली।

संक्षेप में, मैं सोचता हूं कि यह एक उचित आकलन है कि यदि जी-20 या विश्व की बड़ी अर्थव्यवस्थाओं सहित कोई सामूहिक प्रक्रिया सामने नहीं आई होती तो वैश्विक अर्थव्यवस्था का आकार आज कुछ और ही रहा होता। समूह को इससे निश्चित ही शक्ति मिलेगी जबकि यह अपना फोकस संकट से निपटने की ओर से उन ढांचागत मामलों पर ले जा रहा है जो कि इस संकट के लिए जिम्मेदार माने जा रहे हैं। किंतु, प्रक्रिया के इस स्तर पर प्रबंधन को बदलने की चुनौती महत्वपूर्ण है। अब जबकि संकट कम हो गया है, तो सामूहिक दायित्व की भावना भी कम हो रही है और व्यक्तिगत मामले अधिक महत्वपूर्ण हो रहे हैं। ये जी-20 में किस प्रकार दिख रहे हैं?

विभाजक रेखाएं

समूह के भितर मतभेद उभरने के लिए अनेक कारण जिम्मेदार हैं। यह देखते हुए कि यह अनेक देशों का व्यापक समूह है, इसमें मतभेद उभरना कोई अचरज की बात नहीं है। समूह के 20 देशों को अनेक मानदंडों के आधार पर वर्गीकृत किया जा सकता है और प्रत्येक की नीतिगत प्राथमिकताएं अलग हैं जिससे देशी और वैश्विक बातों से निपटने का उनका मार्ग भी अलग है। बड़ा या छोटा, अधिक या कम धनवान, निवल आयातक या निर्यातक, पण्य उत्पादक या विनिर्माता, अधिक या कम आयु वाली जनसंख्या - चाहे जिस भी प्रकार से इसे देखा जाए, इस समूह की संरचना ने यह विश्वास अधिक नहीं बढ़ाना चाहिए कि यह ढांचागत मामलों पर सामान्य सहमति बना सकता है जो कि वैश्विक अर्थव्यवस्था के अनुरूप होगा। मैं इन विभाजक रेखाओं और समूह के लिए उनके निहितार्थ पर कुछ कहना चाहूंगा।

इस स्थिति में, समूह के सदस्यों के बीच सुधार में अंतर गंभीर भिन्नता है। वस्तुत:, जबकि कुछ अर्थव्यवस्थाओं ने अपने देशी सुधार में अच्छी सफलता प्राप्त की है, वहीं कुछ इसके लिए संघर्ष कर रही हैं, तो इस संबंध में यह चर्चा उचित है कि क्या संकट वास्तव में कम हो गया है; दूसरे शब्दों में क्या समूह का प्राथमिक लक्ष्य पूरा हो गया है। वैश्विक सुधार संबंधी धारणा पिछले अनेक महीनों में अस्थिर रही है और इस संबंध में संभावना 2010 के प्रारंभ की तुलना में कम हो गई है। किंतु, इस समग्र अंतरण के भीतर, कुछ देशों की संभावना में लगातार सुधार हुआ है जबकि कुछ अन्य के संबंध में इसमें आशंका बढ़ी है। इससे प्रत्येक देश कौ देशी नीतिगत प्राथमिकता तुरंत प्रभावित होती है। एक ऐसे समूह में जहां एक-दूसरे को हानि न पहुंचाने की प्रतिबद्धता है, इस प्रकार की भिन्नता चुनौती उपस्थित कर देती है।

सर्वाधिक दृश्य दुविधा उन्नत अर्थव्यवस्थाओं द्वारा लगातार मात्रात्मक सुगमता का मामला है जिनके सुधार में कुछ रुकावट दिख रही है। भावी राजकोषीय प्रोत्साहन की क्षमता कम होने पर, जैसा कि देश व्यापक राजकोषीय अधिकता से वापसी के प्रयास करते हैं, आपूर्ति की जा रही अधिक चलनिधि अर्थव्यवस्था को प्रेरित करने का एकमात्र शेष मार्ग दिखता है। एकल देशों की दृष्टि से,

अधिक विकल्प नहीं हैं; लिखत को ठीक से प्रयोग में न लाने से सुधार में गिरावट की जोखिम होती है। इसके देशी प्रभाव के अलावा, संबंधित अर्थव्यवस्थाओं के आकार के कारण इसका वैश्विक प्रभाव भी हो सकता है। इसलिए, यह उचित होगा कि इस मामले पर देशी और वैश्विक हितों को एकत्र लाया जाए।

किंतु, जबकि कुछ दीर्घावधि में अनुकूलता हो सकती है, निकट के समय में, वहीं अननुकूलता के चिह्न भी दिख रहे हैं। उन्नत देशों में अधिक चलनिधि, उसकी संभावना भी, तेजी से सुधर रही उभरती अर्थव्यवस्थाओं तक फैल रही है जो उनके देशी वातावरण में अनेक जटिलताओं को जन्म दे रहीं हैं। कुछ मुद्रा-मूल्यवृद्धि और देशी उत्पादकों की प्रतिस्पर्धा कम होने से सुधार पर उसके प्रभाव के प्रति चिंतित हैं। कुछ अन्य अंतर्वाहों के अल्पावधि स्वरूप और वैश्विक आघात के प्रतिसाद में अकस्मात निर्गम होने की स्थिति में होने वाले व्यवधान या स्रोत देशों में नई गतिविधियों के प्रति चिंतित हैं। ऊर्जा और पण्य आयातकों के बीच यह व्यापक चिंता है कि वैश्विक चलनिधि पण्यों में जा रही है और मूल्यों को प्रेरित कर रही है जिससे परिणामी स्फीतिकारी निहितार्थ भी दिखते हैं। संक्षेप में, मात्रात्मक सुगमता का तत्काल प्रभाव समूह के भीतर विभाजक रेखा का प्रतिनिधित्व करता है हालांकि भविष्य में यह सामूहिक हित का भी हो सकता है।

वित्तीय सुरक्षा जाल अन्य संभाव्य विभाजक रेखा का प्रतिनिधित्व करते हैं, यह आवश्यक नहीं है कि यह सैद्धांतिक हो, किंतु यह विभिन्न दृष्टिकोणों पर हो सकता है जिन्हें देशों के समूह ने उन्हें विकसित करने के लिए प्रयोज किया हो। एलक देशों के नजरिए से वैश्विक आघातों से स्व-रक्षा का सबसे सुरक्षित मार्ग आरक्षित संचय के माध्यम से स्व-बीमा हो सकता है। किंतु, मात्रा के किसी न्यूनतम स्तर से परे, यह बाह्यता निर्माण करना शुरू करता है। 1990 के दशक के अंतिम दौर के पूर्व एशियाई संकट के संदर्भ में पहले बनाए गए बिंदु पर लौटते हुए, इस संकट से प्रभावित और प्रभाव की संभावना वाले देशों द्वारा अपनाया गया स्व-बीमा क्षमता का विकल्प उस समय उपलब्ध सामूहिक सुरक्षा जाल में देखी गई अपर्याप्तता का प्रतिसाद और हाल के संकट के वैश्विक अंतरण से संबंधित कुछ असंतुलनों के प्रति अंशदायी कारक दोनों ही थे।

इस मामले पर विश्लेषणात्मक चर्चा चलती रहेगी, किंतु कई देशों के लिए व्यावहारिक निहितार्थ अन्य देशों को हानि न पहुंचाने के समग्र विचार के तहत बीमा विकल्प के उनके स्वीकार्य मिश्रण पर निर्णय लेना था। यहां यक कि जबकि सामूहिक विकल्प, जैसे कि अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष द्वारा शुरू किए गए हैं, एकल देशों की अपेक्षाओं के लिए अधिक निभावी बने हैं, स्व-बीमा के लाभ, जैसे कि अनेक देशों ने हाल के संकट के दौरान अनुभव किए और जिन्हें अस्वीकार करना कठिन है। इस बीच, निजी सुरक्षा जाल निर्मिति और वैश्विक असंतुलनों के बीच मानी हुई लिंक इस मामले को समूह के तहत विभाजन रेखा बनाती है।

विभाजन रेखा का अन्य उदाहरण वित्तीय विनियमन है। अब यह सामान्य रूप से स्वीकार किया गया है कि हाल के संकट का एक महत्वपूर्ण अंशदाता कारक यह अवसर था कि कुछ उन्नत देशों में मौजूदा विनियामक और पर्यवेक्षी ढांचे ने अत्यधिक जोखिमपूर्ण निवेश उपलब्ध कराया। किंतु, हालांकि यह हो रहा था, समूह में ऐसे अनेक देश हैं जिनका विनियामक ढांचा ऐसे अवसर उपलब्ध नहीं कराता और जिनकी वित्तीय प्रणाली

संकट से तुलनात्मक रूप से कम हानि के उबर गई। विशेष रूप से, देशी वित्तीय प्रणालियों को हुई हानि की मात्रा और उनके सुधार की गति और मजबूती के बीच देशों के बीच महत्वपूर्ण सहसंबंध दिखता है।

किंतु, यहां एक छोटासा प्रश्न है कि वैश्विक वित्तीय समन्वय की प्रक्रिया मजबूत और अनमनीय है जिसका उसमें निहित पूरी जोखिम के साथ सभी संबंधित देशों के लिए भारी संभाव्य लाभ है। इन लाभों की प्राप्ति की एक महत्वपूर्ण अपेक्षा देशों में बीच सामान्य विनियामक सिद्धांतों, मानकों और प्रथाओं का सेट है। यह इस बात को सुनिश्चित करने के लिए आवश्यक है कि विश्व में पूंजी प्रवाह ठोस प्रतिलाभों के वास्तविक विचार और जोखिम पर आधारित होने चाहिए न कि विभिन्न विनियामकों वाले माहौल के बीच विवाचन पर। निसंदेह सिद्धांत में, यह विभाजन का मामला नहीं होना चाहिए; परिणाम में स्पष्ट, सामान्य और हिस्सायुक्त हित है। किंतु, व्यवहार में, विभाजन इस बात पर उभरते हैं कि ये मानक और प्रथाएं वास्तव में कैसी होनी चाहिए; क्या वे सर्वाधिक प्रभावित वित्तीय प्रणाली में मौजूद विशेष स्थिति से प्रेरित हैं और इसलिए तुलनात्मक रूप से स्वस्थ प्रणाली के लिए अनुपयुक्त और भार हैं; और उन्हें विविध देशों में प्रभावी रूप से लागू करने के लिए ज्ञान और मानव पूंजी अपेक्षा।

मैंने संभाव्य विभाजक रेखाओं के कुछ उदाहरण दिए हैं और वित्तीय मामले में प्रक्रिया पर अपना अनुभव और टिप्पणियां रखी हैं। मैं इस प्रस्तुतीकरण का समापन इसकी शुरुआत के बिंदु से करना चाहता हूं। यह एक अत्यधिक भिन्नता वाले देशों का समूह है जिनकी स्थिति और अल्पावधि और दीर्घावधि प्राथमिकताएं भिन्न हैं। यह अपेक्षा करना एकदम भोलापन होगा कि ढांचागत मामलों को संभालने की महत्वाकांक्षा के बावजूद, वर्तमान संकट से बाद के मामलों पर ऐसा समूह एकमत हो जाएगा। इस दृष्टि से, किसी मुद्दे पर एकमत हो जाना सफलता है। यह इस मान्यता को दर्शाता है कि देशों के बीच भिन्नता के बावजूद, वैश्विक समन्वयन वह प्रक्रिया है जो सामूहिक और सहयोगी तरीके से न संभालने पर हानिकारक हो सकती है। जो बात संकट प्रबंधन के लिए सत्य है वह ढांचागत मामलों के दायरे के लिए भी वैध है जो जी-20 और अन्य बहुविध प्रक्रियाओं से संबंधित है।

उभरती बाजार अर्थव्यवस्था/भारतीय परिप्रेक्ष्य

इस पृष्ठभूमि में, अब मैं इस बात को स्पष्ट करने का प्रयास करूंगा कि मैंने ''उभरती बाजार अर्थव्यवस्था'' (ईएमई) परिप्रेक्ष्य को क्या कहा होता, किंतु यह भारतीय परिप्रेक्ष्य के संबंध में मेरी सोच भी दर्शाएगी। इस परिप्रेक्ष्य में एक महत्वपूर्ण बात वह है जो मैंने पिछले घटक के समापन में कही है। वैश्विकरण की प्रक्रिया में ईएमई के लिए इसके सभी रूपों में व्यापक संभावना है। किंतु,यह अपने साथ भारी जोखिम भी लाती है जैसे कि आघातों के प्रति भेद्यता जो कि नियंत्रण से बाहर की स्थिति में उत्पन्न होती है। वैश्विकरण से ''जोखिम-वापसी'' ट्रेडऑफ संबंधी आशा करने का सर्वोत्तम मार्ग मानकों और नियमों के सामान्य सेट को पकड़े रहना है जो कि, जैसा कि मैंने पहले ही कहा है, सामान्य तौर पर प्रक्रिया पर दबाव लाता है कि वह विनियामक विवाचन के बजाय मूल कारकों से प्रेरित हो। इस तर्क के आधार पर, ईएमई किसी भी प्रक्रिया में जुड़ने के लाभ साफ -साफ देखेंगीं जो ऐसे सामान्य मानकों और प्रथाओं को विकसित करके लागू करेंगीं। जी-20 ऐसी ही एक प्रक्रिया है जिसमें यह

लाभ है कि यह एक छोटा समूह होने के कारण आपसी सहमति पर पहुंचना अति कठिन कार्य नहीं होगा।

किंतु, ईएमई की अपने महत्वपूर्ण देशी लक्ष्य और चुनौतियां हैं और नीतिगत निर्णय लेते समय इन्हें प्राथमिकता देनी होगी। इनमें से अनेक शिक्षा, स्वास्थ्य और वित्तीय सेवाओं जैसी आधारभूत आवश्यकताओं तक लोगों की पहुंच बनाने की महत्वपूर्ण चुनौती का सामना कर रही हैं। समन्वित और संतुलित विकास की नीति में वित्तीय प्रणाली की बहुत सी मांग उभरती हैं। इससे, एक ओर क्षमता में तेज विस्तार और प्रस्तावित उत्पादों और सेवाओं के बीच तथा दूसरी ओर, सुरक्षा और विवेक के बीच सतर्क संतुलन आवश्यक हो जाता है। यह संतुलन कार्य, जो कि ईएमई के लिए एक स्तर पर सामान्य है किंतु दूसरे पर ईएमई के बीच भारी अंतर की स्थिति के कारण इसमें भारी अंतर होने के कारण इसका कोई उपयुक्त सामान्य मानक का सेट नहीं बन सकता, हालांकि निम्न सामान्य स्तर पर यह हो सकता है किंतु इससे शायद सुरक्षित वैश्विक वित्तीय प्रणाली बनाने का लक्ष्य पूरा नहीं होगा।

वित्तीय सुरक्षा जाल का मामला भी ऐसा है जिस पर ईएमई का स्पष्ट परिप्रेक्ष्य उभर सकता है। उन्नत और उभरती अर्थव्यवस्थाओं के बीच चिंताओं में अंतर वर्तमान माहौल में दिखा है जिसमें कुछ उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में बढ़ती चलनिधि उभरती अर्थव्यवस्थाओं में संभाव्य रूप से अल्पावधि पूंजी प्रवाह प्रेरित कर रही है। ऐसी स्थिति में, स्व-बीमा पर उचित विचार करना ही होगा। जब आर्थिक मूल घटक मजबूत होंगे तब क्या आरक्षित निधि अल्पावधि पूंजी प्रवाहों में प्रतिगमन पर कार्य करने के का सर्वाधिक प्रभावी माध्यम नहीं होगी? यदि स्व-बीमा समाप्त किया गया होता तो बाहरी बीमा तंत्र पर निर्भरता के दो नकारात्मक निहितार्थ हुए होते। एक, क्रियाविधि और उचित सावधानी में काफी समय लगा होता जिससे सुरक्षा जाल की प्रभावशीलता में कमी आई होती। दो, वैश्विक निवेशकों को संदेह हुआ होता कि कोई बात मूल रूप में गलत है जिससे वर्तमान बहिर्गमन का दबाव बढ़ा होता।

मैंने वह संतुलनात्मक कार्रवाई संबंधी अपनी बात स्पष्ट करने के लिए वित्तीय विनियमन और सुरक्षा जालों के मामले प्रयोग किए जिन्हें ईएमई को देशी प्राथमिकताओं को सुलझाने और वैश्विक मानकों या तंत्र के अर्थपूर्ण सेट के साथ अनुकूलता बनाने के लिए करने की आवश्यकता है। किंतु, इसे ईएमई के लिए अधिक सामान्य मामले के रूप में लिया जा सकता है क्योंकि वे मामलों की पूरी रेंज पर वैश्विक फोरम से जुड़े होते हैं जिस पर समन्वय के लाभों को देशी नीतिगत लक्ष्य पूरा करने के साथ मिलाकर विचार करना होगा।

अनिवार्य रूप से, उभरते बाजार परिप्रेक्ष्य से, जी-20 प्रक्रिया का मूल्य इस बात में है कि यह संतुलन की इस आवश्यकता को पूरी करने में यह कितना सक्षम है। जैसा कि मैंने इस प्रस्तुतीकरण के माध्यम से तर्क देने का प्रयास किया है, अल्पावधि और दीर्घावधि दोनों मामलों में, समूह के देशों के बीच भिन्नता व्यापक है और शायद अनिवार्य भी। मामलों पर ध्यान देने के लिहाज से यह बात समूह को तत्काल हानि की स्थिति में ले आती है क्योंकि भिन्नता को देखते हुए, किसी बात पर सहमति बनना असंभव नहीं तो कम-से-कम कठिन तो है ही।

किंतु, इन निहित रुकावटों की स्थिति में, यह पुन:आश्वासनकारी है कि इस समूह को काफी सफलता मिली है संकट प्रबंधन की तात्कालिक बाध्यताओं से परे है और कुछ मूल ढांचागत मामलों पर ध्यान देता है।

इस प्रक्रिया का महत्व, जैसा कि मैंने इस प्रस्तुतीकरण में पहले भी उल्लेख किया है, यह है कि सभी संबंधित पक्षों ने यह माना है कि वैश्विकरण की प्रक्रिया में जब तक यह किसी प्रकार से नियंत्रित है तब तक इसके कुछ लाभ हैं। नियंत्रण का आधार, जैसा कि जी-20 ने दर्शाया है, सामान्य सिद्धांत हैं जिन पर व्यवहार और कार्यान्वयन दोनों के लिए सामान्य या कम-से-कम अनुकूल मानक आधारित हैं। किंतु, नियंत्रण का अर्थ देशीकरण नहीं है। जहां तक सामान्य मानक प्रथा और संस्था में भिन्नता के साथ जितने मिलाए जा सकते हैं, जो एकल देशों को उनकी देशी प्राथमिकताओं पर प्रभावी रूप से ध्यान देने की अनुमति देते हैं, तो व्यवस्था कार्यसाध्य होगी।

जैसे कि प्रत्येक देश के लिए वैश्विक मानकों को स्वीकार्य करना और उनका पालन करना आवश्यक होता है, समूह के लिए भी अनुरूपता और स्वायत्तता के बीच यथासंभव पतली पतली और धूसर रेखा बनाए रखने की आवश्यकता होती है। सभी मामलों पर इसकी प्रभावशीलता जिनका यह समाधान करना चाहता है, किंतु विशेष रूप से ढांचागत मामलों पर, मुख्य रूप से उक्त रेखा पर निर्भर करेगा। समूह के प्रत्येक सदस्य ने यह महसूस करना चाहिए कि समूह में रहने के कुछ ठोस लाभ हैं और यह धारणा इस अवसर पर निर्भर करती है जो वैध देशी प्राथमिकताएं पूरी करने के लिए उपलब्ध है और जो समूह के अन्य देशों के हितों को हानि नहीं पहुंचाता है।

इस मानक के साथ, समूह ने बहुत अच्छा कार्य किया है। काफी अंतरों के बीच, जिनमें से कुछ का मैंने उल्लेख किया है, कुछ बातों पर आम सहमति, उदाहरण के लिए सुरक्षा जाल, वित्तीय विनियमन और अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष के सुधार से पता चलता है कि इसे अनेक महत्वपूर्ण मामलों पर संतुलन के समायोजन का मार्ग मिल गया है। इस सहमति के स्वरूप की व्यापक रिपोर्ट की गई है और जिओंगजी, कोरिया में वित्त मंत्रियों और केंद्रीय बैंकों के गवर्नरों की हाल में हुई बैठक में के संदर्भ इस पर व्यापक चर्चा हुई है अत: मैं इसे यहां दोहराना नहीं चाहता। किंतु मैं जिस बात पर बल देना चाहता हूं वह यह है सहमति और स्वयं करार पर पहुंचने की प्रक्रिया का कारण सामान्य सिद्धांतों और मानकों को स्वीकार करना था जो कि देशोंद्वारा उनकी आंतरिक प्रणाली बनाने में अच्छा समझे गए मार्ग के बीच नहीं आते।

इसका अर्थ यह नहीं है कि समूह में किसी भी प्रकार की असहमति नहीं है या अनसुलझे मामले नहीं हैं। सब कुछ ठीक है सोचना भी सही नहीं होगा। किंतु, सभी सामूहिक कार्यों जैसे ही, असहमति,यहां तक की कुछ विवाद भी, किसी भी प्रकार से प्रक्रिया का महत्व कम नहीं कर सकता। इसे इस बात से आंकना चाहिए कि यह क्या कर सकता है, न कि यह क्या नहीं कर सकता।

समापक टिप्पणी

कम-से-कम, जी-20 बृहत अर्थव्यवस्थाओं में एक ढांचागत तरीके से ज्ञान और अनुभव बांटने का मंच उपलब्ध कराता है। इसके द्वारा उत्पन्न नेटवर्क निश्चित ही उत्पन्न अवसरों पर नीतिगत कार्रवाई के लिए समन्वय को सुगम बनाता है। इस संबंध में, यह निश्चित ही उपयोगी और प्रभावी संकट प्रबंधन प्रणाली है।

किंतु, उभरते बाजार परिप्रेक्ष्य से, इसकी उपयोगिता संकट प्रबंधन से भी आगे जा सकती है और वास्तव में गई भी है। ये देश निश्चित ही मानते हैं कि किसी अर्थपूर्ण सामूहिक कार्रवाई के अभाव में, वैश्विकरण के लाभ पूर्णत:

प्राप्त नहीं होंगे और जोखिम भी बढ़ जाएगी। सामान्य सिद्धांतों पर इसके बल, नीतिगत प्राथमिकताओं और रणनीतियों पर निर्णय लेने में राष्ट्रीय स्वायत्तता की पहचान और बहुत महत्वपूर्ण रूप से, ''हानि मत पहुंचाओं'' के इसके सिद्धांत पर बल देने से इस सामूहिक कार्रवाई का असर बढ़ेगा। पिछले दो वर्षों में इस समूह के निष्पादन के व्यावहारिक आकलन से पता चलेगा कि हो सकता है कि इसे सभी कार्यों में समान सफलता न मिली हो, किंतु इसकी सफलताएं महत्वपूर्ण हैं और अनेक प्रकार से इसके दृष्टिकोण का समर्थन करती हैं।

मैं मुझे आमंत्रित करने के लिए आयोजकों को और मेरी बात सुनने के लिए आप सभी को एक बार फिर धन्यवाद देता हूं।